संकट के बाद बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण में सुधार - वैश्विक स्तर पर सोचें, स्थानीय जरूरतों के अनुसार कार्य करें*

दुव्वुरी सुब्बाराव

"वैश्विक बैंकिंगः निदर्शनात्मक बदलाव" विषय पर इस फिक्की-आइबीए सम्मेलन के उद्घाटन के लिए मुझे यहां आमंत्रित करने के लिए हार्दिक धन्यवाद। यह सम्मेलन बैंकों के वार्षिक कैलेंडर की एक प्रमुख घटना है और बैंकिंग बिरादरी के साथ बात करने और उनसे विचार-विमर्श करने के अवसर को मैं काफी महत्व देता हूं।

2. पिछली बार इस मंच से जब मैं आपसे मुखातिब हुआ था तो मैंने वैश्विक संकट से प्राप्त कुछ प्रारंभिक सबकों के बारे में उल्लेख करते हुए यह कहा था कि बैंकिंग विनियमन तथा पर्यवेक्षण संबंधी सुधारों से जुड़ी बहसों को दिशा देने में इनकी क्या भूमिका थी। पिछले एक वर्ष के दौरान, सुधार की कार्यसूची के आकार लेने तथा अधिकांश उपायों के बारे में आपसी समन्वय तक पहुंचने की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। सुधार के पैकेज का बल बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ करने, प्रोत्साहन संबंधी ढांचे को ठीक करने तथा इसकी दीर्घावधि स्थिरता सुनिश्चित करने पर रहा है। वित्तीय संकट से प्राप्त इस बड़े सबक को प्रतिबिंबित करते हुए कि यह जरूरी नहीं कि अच्छी हालत वाले बैंकों के एक समूह से समेकित स्तर पर एक स्वस्थ बैंकिंग प्रणाली भी स्थापित हो, सुधारों का फोकस एकल संस्थागत स्तर पर व्यष्टि विवेकपूर्ण आयाम तथा प्रणालीगत स्तर पर समष्टि विवेकपूर्ण आयाम दोनों पर रहा है।

3. इस प्रयास में अग्रणी भूमिका बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति(बीसीबीएस) ने निभाई जिसने सुधार के एजेंडे को परिभाषित करने तथा हरेक घटक को अलग करने के लिए पिछले वर्ष के दौरान कई बैठकें तथा चर्चाएं कीं। जैसा कि आप जानते हैं, भारत बीसीबीएस में शामिल होने वाला नया सदस्य देश है तथा बासेल III को अंतिम रूप देने की प्रक्रिया में रिज़र्व बैंक सक्रिय रूप से जुड़ा रहा है।

4. जुलाई 2010 में बीसीबीएस ने बासेल III प्रस्तावों के संबंध में हुई व्यापक सहमति को दर्शाते हुए एक विस्तृत पेपर प्रस्तुत किया। मोटे तौर पर, इन सुधारों

* 'वैश्विक बैंकिंगः निदर्शनात्मक बदलाव' विषय पर 7 सितंबर 2010 को फिक्की-आइबीए सम्मेलन में दुव्वुरी सुब्बाराव, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक का उद्घाटन भाषण।

के चलते बैंकों को अधिक और बेहतर गुणवत्ता वाली पूंजी के साथ-साथ अधिक चलनिधि रखनी होगी जिससे उनका लीवरेज सीमित होगा और इसके कारण अच्छे समय में पूंजी का एक ऐसा बफर गठित करने की जरूरत पड़ेगी जिसका उपयोग दबाव के समय में किया जा सकेगा। बासेल III की प्रक्रिया अभी भी पूरी नहीं हुई है। विशेष रूप से, उपायों का वास्तविक अंशांकन और उनके चरणबद्ध कार्यान्वयन का निर्धारण अभी किया जाना है। यह कार्य इन उपायों की युक्तियुक्तता तथा बैंकों के तुलनपत्रों तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं पर इसके असर के आगे और आकलन करने के बाद किया जाएगा।

5. जैसा कि आशा की जा रही थी कि बासेल III प्रस्तावों के निहितार्थों तथा इसके लाभ-हानि के विषय ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मीड़िया का ध्यान आकर्षित किया है। भारत में भी इस विषय पर कुछ चर्चाएं हुईं जिनका फोकस इससे जुड़े हमारे सरोकार से था। मेरे विचार में, आपने जिस फिक्की-आइबीए का मंच मुझे उपलब्ध कराया है उसका सबसे सही उपयोग बासेल III प्रस्तावों के व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए भारतीय बैंकों के लिए इनके संभावित निहितार्थ के बारे में किया जा सकता है। सम्मेलन का प्रमुख विषय '*बैंकिंग 2020-दशक के आश्वासन को साकार करना*' काफी सटीक है क्योंकि बैंकिंग क्षेत्र को यह आकलन करना है कि वह दोहरे अंकों वाली वृद्धि दर हासिल करने तथा हमारे बहुप्रतीक्षित गरीबी न्यूनीकरण की दिशा में किस प्रकार अपना योगदान दे सकता है। मुझे आशा है कि बासेल III पैकेज के बारे में मैं जो आकलन प्रस्तुत करूंगा उससे हमारे विकास की प्रक्रिया में बैंकों की भूमिका का सूचनाप्रद मूल्यांकन करने में मदद मिलेगी।

6. मैं अपनी बात बासेल III पैकेज के प्रत्येक घटक के बारे में चर्चा के साथ शुरू करना चाहूँगा। इन घटकों में से प्रत्येक से जुड़े प्रस्तावों के बारे में मैं बातऊँगा कि इसके क्या सामान्य निहितार्थ हैं तथा उसके बाद इस पर भारतीय दृष्टिकोण प्रस्तुत करूंगा।

I. बीसीबीएस प्रस्तावों का पूंजी पर्याप्तता ढांचा

पूंजी की गुणवत्ता, एकरूपता तथा पारदर्शिता में सुधार लाना

7. पूंजी पर्याप्तता संबंधी ढांचे से जुड़े प्रस्तावों का उद्देश्य पूंजी की उच्च गुणवत्ता को सुनिश्चित करना, विभिन्न देशों के बीच पूंजी की परिभाषा में एकरूपता लाना तथा पूंजी आधार को पारदर्शी बनाने के लिए समुचित प्रकटीकरण करना है। मुख्य फोकस सामान्य पूंजी को बैंक की पूंजी का मुख्य आधार बनाना और विनियामक पूंजी के अन्य घटकों की हानि सहने की क्षमता में वृद्धि करना है। जो प्रमुख परिवर्तन किए जाएंगे उनमें न्यूनतम टियर I पूंजी का स्पष्ट रूप से निर्धारण; समेकित न की गई वित्तीय संस्थाओं की सामान्य हिस्सेदारी में किए गए निवेश से उल्लेखनीय हिस्से के लिए सामान्य इक्विटी से किसी निर्धारित न्यूनतम सीमा से ऊपर कटौती करना; समूह पूंजी में अल्पमत हितों की स्वीकार्यता को अनुषंगी बैंकों के लिए आवश्यक न्यूनतम पूंजी आवश्यकता के हिस्से तक सीमित करना; और पूंजी के विभिन्न घटकों का समुचित प्रकटीकरण।

बासेल II ढांचे के जोखिम-कवरेज में सुधार लाना

8. संकट ने बैंकों द्वारा उपयोग किए जा रहे मात्रात्मक जोखिम प्रबंधन मॉडलों की कई खामियों का उजागर किया। इनमें से एक खामी मॉडल द्वारा उनकी ट्रेडिंग बहियों की स्थितियों की बाजार जोखिम को, विशेष रूप से दबाव की स्थिति में, न पकड़ पाना है। इस खामी को दबाव वाली स्थिति के अनुरूप मानदंडों में सामंजस्य स्थापित करके पूंजी की गणना करने की जरूरत के निर्धारण द्वारा दूर करने का प्रयास किया गया है।

9. पिछले दशक में बैंकों के डेरिवेटिव कार्यकलापों में भारी वृद्धि देखी गई जिसके चलते प्रतिपक्षी कर्ज जोखिम में अत्यधिक वृद्धि हुई। हाल के बासेल II ढांचे की खामियों में से एक यह है कि दबाव वाली स्थितियों में

होने वाली अप्रत्याशित प्रतिपक्षी एक्सपोजर को इससे पकड़ा नहीं जा सकता। इसके अलावा, संकट के दौरान हमने देखा कि प्रतिपक्षियों की वित्तीय हालत बिगड़ने के साथ-साथ उन्हें डेरिवेटिव लेनदेनों में हानि भी उठानी पड़ी जैसा कि 'जोखिम की गलत दिशा' के दौरान होता है। इन चिंताओं को दूर करने के लिए बासेल II के प्रतिपक्षी कर्ज जोखिम ढांचे में संशोधन किया जा रहा है।

पूंजी पर्याप्तता संबंधी ढांचा: भारतीय बैंकों पर प्रभाव

10. इस बात की कम संभावना है कि प्रस्तावित नए पूंजी नियमों से भारतीय बैंकों पर कोई उल्लेखनीय प्रभाव पड़ेगा। 30 जून 2010 को भारतीय बैंकिंग प्रणाली का जोखिम भारित आस्तियों के प्रति सकल पूंजी अनुपात 13.4 प्रतिशत था जिसमें से टियर I पूंजी का हिस्सा 9.3 प्रतिशत था। यद्यपि बासेल III मानदंडों को अंतिम रूप दिया जाना है, फिर भी यह संभावना कम ही है कि यह उक्त आंकड़ों से अधिक होगा। इस प्रकार, हमें नहीं लगता कि समग्र पूंजी आवश्यकता और पूंजी की गुणवत्ता दोनों ही दृष्टि से हमारी बैंकिंग प्रणाली को प्रस्तावित नए पूंजी नियमों का पालन करने में किसी भारी दबाव का सामना करना पड़ेगा।

11. भारतीय बैंक इस समय वे अधिकांश कटौतियां कर रहे हैं जो बासेल III के अंतर्गत प्रस्तावित हैं। इसके अलावा, हमारे बैंकों का पुनःप्रतिभूतिकरण संबंधी एक्सपोजर नहीं हैं तथा उनकी ट्रेडिंग बहियां आकार में छोटी हैं। तथापि, कुछ कटौतियों को टियर I तथा टियर II से सामान्य इक्विटी में अंतरित किए जाने का कुछ प्रतिकूल असर पड़ सकता है।

12. प्रतिपक्षी कर्ज जोखिम ढांचे से संबंधित प्रस्तावित परिवर्तनों के बड़ी मात्रा में ओटीसी द्विपक्षीय डेरिवेटिव स्थितियों वाले कुछ भारतीय बैंकों पर पूंजी पर्याप्तता संबंधी निहितार्थ हो सकते हैं। ये प्रस्तावित परिवर्तन केंद्रीय प्रतिपक्षियों (सीसीपी) के माध्यम से बहुपक्षीय निपटान प्रणाली की परिसीमा में आने वाले डेरिवेटिव लेनदेनों को विस्तार देने के महत्व को रेखांकित करते हैं।

II. बैंकों के वित्तीय लीवरेज को रोकना : बीसीबीएस के प्रस्ताव

13. संकट के दौरान मंदी की तीव्रता को बड़े अंतरराष्ट्रीय बैंकों द्वारा किए गए अत्यधिक वित्तीय लीवरेज ने बढ़ाया जो 50:1 के उच्च स्तर तक चला गया था। लीवरेज के इस अतिरेक को रोकने के संबंध में बासेल समिति द्वारा की गई कार्रवाई में एक ऐसे लीवरेज अनुपात की शुरुआत करना है जो सरल, पारदर्शी हो, एक विश्वसनीय पूरक के रूप में कार्य करने के लिए गैर-जोखिम आधारित मापन तथा जोखिम आधारित जरूरतों को पूरा करता हो।

बैंकों के वित्तीय लीवरेज को रोकना : भारतीय बैंकों पर असर

14. अनुमान बताते हैं कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली में लीवरेज सामान्य स्तर का है। बीसीबीएस के साथ हुई चर्चाओं के दौरान हमने यह तर्क दिया कि हमारे बैंकों के एसएलआर पोर्टफोलियो को लीवरेज की गणना करते समय हिसाब में नहीं लिया जाना चाहिए क्योंकि यह विनियमन द्वारा निर्धारित है और इसमें जोखिम का स्तर सामान्य है(अर्थात इसमें कर्ज जोखिम नहीं है, केवल बाजार जोखिम है)। तथापि, बीसीबीएस ने सिद्धांत रूप में यह रुख अपनाया है कि नकदी, जाहिर है कि इसमें सबसे कम जोखिम है, सहित किसी भी प्रकार की आस्तियों को लीवरेज के मापन के प्रयोजन हेतु छूट नहीं दी जानी चाहिए। तथापि, चूंकि काफी भारतीय बैंकों की टियर I पूंजी का स्तर संतोषजनक (8 प्रतिशत से अधिक) है तथा उनकी डेरिवेटिव कार्यकलाप की मात्रा काफी ज्यादा नहीं है, अतः हमें नहीं लगता कि भारतीय बैंकों के लिए लीवरेज अनुपात चिंता का विषय होगा।

III. वित्तीय क्षेत्र विनियमन की अनुचक्रीयता को कम करना: बीसीबीएस के प्रस्ताव

15. आलोचक यह मानते हैं कि बासेल II पूंजी विनियमनों की कमियों में से एक प्रमुख कमी उनमें अंतर्निहित अनुचक्रीयता है। अनुचक्रीयता संबंधी इस बहस ने संकट के दौरान काफी ध्यान आकर्षित किया। बैंकों ने पाया कि हानियों के कारण उनके पूंजी अनुपात के और कम हो जाने से वे आगे और उधार नहीं दे पा रहे हैं, जबकि इस दौरान अधिक उधार दिया जाता तो उससे गिरावट को रोकने में मदद मिलती। अनुचक्रीयता के प्रभाव को कम करने के लिए बीसीबीएस ने निम्नलिखित प्रस्ताव किएः (क) पूंजी की गणना को सामान्य संभाव्यता के आधार पर किया जाए जो ज्यादा पारंपरिक अनुमान है, (ख) अधिक अग्रदर्शी प्रावधानों को प्रोत्साहन दिया जाए, (ग) हरेक बैंक तथा बैंकिंग क्षेत्र के स्तर पर पूंजी के बफर का निर्माण करने के लिए पूंजी को बचाए रखना ताकि दबाव के समय में उसका उपयोग किया जा सके, तथा (घ)कर्ज में अत्यधिक वृद्धि को रोककर प्रणालीव्यापी जोखिम का प्रबंध करना।

16. प्रतिचक्रीय प्रावधान करने की अवधारणा तथा पूंजी बफर के गठन का तात्पर्य यह है कि बैंकों को अच्छे समयों में प्रावधानों तथा पूंजी का उच्च स्तर बनाए रखना चाहिए जिसका उपयोग सुरक्षा तथा सुदृढ़ता संबंधी मुद्दों को ध्यान में रखते हुए आर्थिक संकुचन के समयों में किया जा सकता है। यह एक ऐसे बफर दायरे को परिभाषित करके किया जाएगा जो विनियामक न्यूनतम पूंजी आवश्यकता से ऊपर होगा। यह अवधारणा काफी आकर्षक है, परंतु इसे लागू करना एक जटिल कार्य है और इससे जुड़ी कई चुनौतियां भी हैं।

17. *पहली* और सबसे प्रमुख चुनौती आर्थिक चक्र में वस्तुनिष्ठ और गोचर मानदंडों के आधार पर उस परिवर्तन बिन्दु की पहचान करना है जो यह संकेत दे कि कहां से पूंजी-बफर का निर्माण करना और कहां से इसका उपयोग शुरू करना है। *दूसरी* चुनौती यह है कि हम कौन-से आर्थिक संकेतक का उपयोग करें? किसी एक ऐसे समष्टि आर्थिक चर की पहचान करना कठिन है जो अच्छे तथा बुरे समय दोनों के लिए निर्भरयोग्य संकेतक हो। उदाहरण के लिए, वृद्धि के दौर में कर्ज में बढ़ोतरी एक अच्छा संकेतक हो सकता है परंतु कर्ज में संकुचन सामान्यतः प्रणाली में बढ़ते दबाव का अंतराल संकेतक होता है। *तीसरी* बात यह कि एक ऐसे पूंजी बफर के निर्माण संबंधी किसी भी दृष्टिकोण से जिसका आकार आर्थिक चक्र के साथ बदलता हो, वैश्विक परिदृश्य में आर्थिक चक्र को परिभाषित में आने वाली कठिनाई से जुड़ी चुनौती आती है क्योंकि आर्थिक चक्र वैश्विक स्तर पर एकसमान नहीं होते। *चौथी* बात, अनुभव दर्शाता है कि अतिसंवेदनशीलताओं में वृद्धि धीरे-धीरे होती है, अक्सर इसमें कई वर्ष लगते हैं, परंतु विपत्ति शीघ्रता से उभरकर आती है। अतः पूंजी बफर को अकस्मात जारी करना पड़ सकता है। *पांचवीं* बात, पूंजी के सही आकार का निर्धारण एक कठिन कार्य होने के साथ-साथ एक विवादास्पद मुद्दा भी है; यह इतना बड़ा अवश्य होना चाहिए कि गिरावट के दौर में हानियों को झेल सके और बैंक को उधार देना जारी रखने में मदद कर सके, परंतु यह इतना बड़ा भी नहीं होना चाहिए कि विफलता के प्रति बीमा के रूप में की गई यह व्यवस्था अत्यधिक खर्चीली हो। अंततः, पूंजी बफर की कोई भी योजना सरल तथा पारदर्शी होने के साथ-साथ उसे लागू करने की लागत कम होनी चाहिए तथा यह यथासंभव नियम आधारित होना चाहिए। क्या हम अनुचक्रीयता को कम करने के लिए एक ऐसे ढांचे का निर्माण कर सकते हैं जो इन सभी अपेक्षाओं की पूर्ति करता हो?

18. बीसीबीएस इन सभी मुद्दों के समाधान हेतु कार्य कर रहा है। फिर भी इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि विभिन्न देशों के बीच वित्तीय प्रणाली के विभिन्न ढांचों तथा विकास के विभिन्न चरणों को विचार करते हुए इसे लागू करते समय राष्ट्रीय विवेकाधिकार का उपयोग करने हेतु अनुमति देना अत्यंत आवश्यक है।

वित्तीय क्षेत्र विनियमन की अनुचक्रीयता को कम करना: भारतीय परिप्रेक्ष्य

19. पूंजी बफर तथा प्रावधान के जरिए वित्तीय क्षेत्र विनियमन की अनुचक्रीयता को रोकने संबंधी प्रस्तावित उपायों से बैंकों पर अतिरिक्त लागत आएगी। इससे जुड़ी सामान्य चिंता के अलावा, भारत में हमारे लिए एक और चिंता का विषय है जो प्रतिचक्रीय बफर के निर्धारण हेतु उपयोग किए गए चर से संबंधित है। इसके लिए जिस चर के बारे में सबसे अधिक चर्चा हो रही है वह है जीडीपी की तुलना में कर्ज का अनुपात। परंतु, कर्ज-जीडीपी अनुपात का उपयोग करने में दिक्कतें हैं। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत, जहां यह अनुपात स्थिर है, भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं में ढांचागत कारणों से - उच्चतर वृद्धि के कारण वर्धित कर्ज मध्यस्थन तथा वित्तीय समावेश को बढ़ाने के प्रयासों के चलते- इसमें वृद्धि हो सकती है।

20. वस्तुतः, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किया गया एक अध्ययन दर्शाता है कि जीडीपी की तुलना में कर्ज का अनुपात ऐतिहासिक रूप से हमारी बैंकिंग प्रणाली में प्रणालीगत जोखिम के बढ़ने के संकेतक के रूप में अच्छा संकेतक नहीं रहा है। इसके अलावा, स्थावर संपदा, आवास, सूक्ष्म-वित्त तथा उपभोक्ता वस्तु संबंधी कर्ज जैसे क्षेत्र भारत में अपेक्षाकृत नए हैं और बैंकों ने हाल ही में इन क्षेत्रों का बड़े पैमाने पर वित्तपोषण करना शुरू किया है। ऐसे क्षेत्रों में बढ़ती हुई जोखिम का जीडीपी के प्रति सकल कर्ज अनुपात से सटीक रूप में मापन नहीं किया जा सकता। इसलिए हमने प्रतिचक्रीय नीतियों के संबंध में क्षेत्रगत दृष्टिकोण को अपनाया है और मेरा मानना है कि हमें इसे आगे उपयोग जारी रखने की जरूरत पड़ेगी। प्रतिचक्रीय उपायों को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए हमें सकल तथा क्षेत्रगत स्तरों पर व्यापार चक्रों का पूर्वानुमान करने तथा तत्काल समय आधार पर इनकी पहचान करने की क्षमता को बढ़ाना होगा। इसके लिए बेहतर गुणवत्ता वाले आर्थिक तथा वित्तीय आंकड़ों तथा उन्नत स्तर की विश्लेषणात्मक क्षमताओं की जरूरत पड़ेगी।

IV. चलनिधि जोखिम प्रबंधन: बीसीबीएस के प्रस्ताव

21. वित्तीय उथल-पुथल ने प्रतिसूचना चक्र को रेखांकित किया जिसके जरिए चलनिधि से जुड़ी संस्थागत अड़चनें अंतरसंबद्धता के कारण प्रणालीगत ऋण शोधन क्षमता संबंधी संकट के रूप में फैल गयी। एक-दूसरे से आपस में जुड़ा हुआ अंतरसंबंध निम्नानुसार कार्य करता है। एक संस्था चलनिधि संबंधी समस्या का सम्मुखीन होती है, वह उससे उबर नहीं पाती है क्योंकि निधीयन संबंधी वातावरण प्रतिकूल है, चलनिधि जुटाने के लिए आस्तियों की हड़बड़ी में बिक्री करने लगती है, इस प्रक्रिया में वह हानि उठाती है जिसके चलते निधियां जुटाना और कठिन हो जाता है तथा उसके बाद फिर से आस्तियों की किसी भी कीमत पर बिक्री हेतु दबाव में आ जाती है। इसके कारण आस्तियों की कीमतों में तेजी से गिरावट आती है और यह दबाव तेजी से अन्य संस्था तक फैलते हुए एक विस्फोटक स्थिति तक पहुंच जाता है, फिर वह अन्य बैंकों और वित्तीय संस्थाओं तक फैल जाता है जिसके कारण अंततः समग्र प्रणाली एक 'घातक चक्रट में आ फंसती है।

22. बीसीबीएस के प्रस्तावों में चलनिधि जोखिम का प्रबंधन करने हेतु दो विनियामक मानकों का उल्लेख किया गया है: (i) अल्पावधि में आघात-सहनीयता सुनिश्चित करने के लिए *चलनिधि कवरेज अनुपात*; तथा (ii) दीर्घावधि में आघात-सहनीयता में वृद्धि हेतु *निवल स्थिर निधीयन अनुपात*। चलनिधि जोखिम की निगरानी के लिए पर्यवेक्षकों द्वारा अपनाए गए मानदंडों की बहुलता को ध्यान में रखते हुए नए प्रस्तावों में चलनिधि जोखिम की निगरानी के सामान्य उपायों का एक सेट शामिल किया गया है।

चलनिधि जोखिम प्रबंधन: भारतीय दृष्टिकोण

23. चलनिधि मानक को लागू करने के संबंध में भारत में बैंकों की मुख्य चुनौती संबंधित आंकड़ों का संकलन शुद्ध रूप में तथा पूरे ब्योरों के साथ करने के लिए क्षमता का विकास करना तथा पर्याप्त शुद्धता सहित चलनिधि दबावों के परिदृश्यों का पता लगाना और उनका पूर्वानुमान करना है जो उनकी स्थिति के अनुरूप हो। चूंकि हमारे वित्तीय बाजार दबाव के उस स्तर से नहीं गुजरे हैं जिनसे उन्नत देशों के वित्तीय बाजार गुजर चुके हैं, इसलिए दबाव के समुचित परिदृश्य का पूर्वानुमान लगाना निर्णय लेने की क्षमता की दृष्टि से एक बड़ी चुनौती होगी।

24. सकारात्मक पक्ष में, हमारे अधिकांश बैंक खुदरा कारोबार मॉडल का अनुसरण करते हैं और उनके पास पर्याप्त मात्रा में चल आस्तियां हैं जो नए मानदंडों की अपेक्षाओं को पूरा करने में उनकी सहायता करेगा। एक और मुद्दा है जिसका संबंध इस बात से है कि एसएलआर की सांविधिक धारिताओं की किस सीमा को प्रस्तावित चलनिधि अनुपात हेतु हिसाब में लिया जा सकता है। एक तर्क यह भी हो सकता है कि उनको हिसाब में लिया ही नहीं जाना चाहिए क्योंकि इन्हें सतत आधार पर बनाए रखना जरूरी है। तथापि, एसएलआर धारिताओं के कम-से-कम एक हिस्से को दबाव की स्थितियों में चलनिधि अनुपात की गणना हेतु हिसाब में लिया जाना युक्तिसंगत होगा, विशेष रूप से इसलिए कि ये सरकारी बांड हैं और रिज़र्व बैंक इनकी जमानत पर चलनिधि उपलब्ध कराता है।

V. प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं (एसआइएफआइ) के साथ व्यवहार: बीसीबीएस के प्रस्ताव

25. बीसीबीएस अंतरराष्ट्रीय संदर्भ में प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं के साथ व्यवहार हेतु एक समुचित ढांचे के विकास का प्रयास कर रहा है। इसमें कई सारे कार्य जुड़े हैं जो इस प्रकार हैं: प्रणालीगत जोखिम के संकेतकों का विकास करना, प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं की पहचान करना, पूंजी तथा चलनिधि अधिभार और उन्नत पर्यवेक्षण के जरिए एसआइएफआइ के लिए भिन्न प्रणालियां स्थापित करना, करदाताओं के पैसों का उपयोग किए बिना एसआइएफआइ की समस्याओं के समाधान हेतु क्षमता का विकास करना, एसआइएफआइ की विफलता की संभाव्यता तथा प्रभाव को कम करना, विफलता की स्थिति में संसर्ग जनित जोखिम को कम करने के लिए मूल वित्तीय बाजार ढांचे को सुदृढ़ करना और एसआइएफआइ की निगरानी व्यवस्था में सुधार लाना है।

26. यदि हम यह मान भी लें कि आधार स्तर के विनियमनों के अलावा एसआइएफआइ पर अतिरिक्त विनियमन लगाए जाने चाहिए, फिर भी कई ऐसे मुद्दे हैं जिनका आवश्यक ढांचा तैयार करते समय समाधान किया जाना जरूरी है। पहला मुद्दा प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण संस्थाओं की पहचान करने हेतु वस्तुनिष्ठ मानदंड का विकास करने से जुड़ा हुआ है। दूसरा मुद्दा यह है कि हम इस मानदंड को किस प्रकार लागू करें, क्योंकि आर्थिक माहौल के अनुसार संस्थाविशेष के प्रणालीगत महत्व में समय सापेक्षता तथा देश की स्थितियों के अनुरूप बदलाव आ सकता है। अंत में, एसआइएफआइ तथा गैर-एसआइएफआइ के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा तय करते समय विवेक की भूमिका अधिक होती है और इसमें नैतिक जोखिम भी जुड़ा हुआ है।

प्रणालीगत जोखिम को कम करना: भारतीय दृष्टिकोण

27. यह आशा है कि एसआइएफआइ की पहचान करने हेतु जो ढांचा उभरकर आएगा वह सभी देशों पर समान रूप से लागू होगा। भारत को भी इसे अंगीकार करना होगा। बीसीबीएस ढांचे के अंतर्गत पहचान की प्रणाली अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में होगी और देशी संदर्भ में एसआइएफआइ की पहचान करने हेतु हमें अतिरिक्त

उपाय करने होंगे, चाहे ये अंतरराष्ट्रीय सूची में न भी हों। दोनों ही स्थितियों में, यदि प्रणालीगत जोखिम पूंजी तथा चलनिधि प्रभार लगाने के प्रस्ताव पर अंततः सहमति बन जाने पर भी कुछ भारतीय बैंकों को अतिरिक्त पूंजी और चलनिधि प्रभार बनाए रखने के लिए कहा जा सकता है।

28. एसआइएफआइ के विफल होने की स्थिति में इसके समाधान से जुड़ा मुद्दा भी है। हमें ऐसे ढांचों को आगे लाना होगा जो इस प्रकार की स्थिति का समाधान सुगमता से तथा व्यवस्थित तरीके से करे। रिज़र्व बैंक द्वारा भारत की वित्तीय होल्डिंग कंपनियों की उपयुक्तता की जांच करने हेतु हाल में एक कार्यदल का गठन किया गया है जो इस दिशा में बढ़ाया गया एक कदम है। रिज़र्व बैंक वित्तीय संगुटों के लिए विनियामक तथा पर्यवेक्षी ढांचे में भी निरंतर सुधार करता रहा है। वित्तीय लेनदेनों की बड़ी मात्राओं को केंद्रीय प्रतिपक्षियों के माध्यम से बहुपक्षीय निपटारे के दायरे में लाने के लिए भी प्रयास जारी हैं।

VI. बैंकों की क्षतिपूर्ति संबंधी प्रथाओं का विनियमन:बीसीबीएस के प्रस्ताव

29. इस बात को अब सामान्य तौर पर स्वीकार कर लिया गया है कि उन्नत देशों के बैंकिंग क्षेत्रों के क्षतिपूर्ति संबंधी दोषपूर्ण प्रोत्साहन ढांचे ने संकट को बढ़ाया। बैंक के कार्यपालकों की कार्य-निष्पादन आधारित क्षतिपूर्ति को आम तौर पर इस आधार पर सही ठहराया जाता है कि बैंकों के लिए प्रतिभा को आकर्षित करना और उसे अपने पास बनाए रखना जरूरी होता है। अब पीछे मुड़कर देखते हैं तो हमें लगता है कि क्षतिपूर्ति के ढांचे से पनपने वाले विकृत प्रोत्साहन को नजरअंदाज कर दिया गया था। बैंक के कार्यपालकों का ध्यान अल्पावधि में मिलने वाले लाभ के प्रति इस हद तक केंद्रित था कि उन्होंने दीर्घावधि हितों पर समुचित ध्यान नहीं दिया जिसका भयावह परिणाम हुआ। उसके बाद वित्तीय स्थिरता बोर्ड ने क्षतिपूर्ति संबंधी प्रथाओं को नियंत्रित करने के लिए सिद्धांतों का एक सेट तैयार किया और बासेल समिति ने इन सिद्धांतों के अनुपालन के आकलन हेतु एक क्रियाविधि विकसित की है। प्रस्तावित ढांचे में परिवर्ती वेतन के हिस्से को बढ़ाना, दीर्घावधि मूल्य सृजन के साथ इसे जोड़ना तथा कार्यपालकों द्वारा की जाने वाली भविष्य की हानियों को पूरा करने के लिए आस्थगन तथा वसूली संबंधी प्रावधानों की शुरुआत करना शामिल है।

बैंकों की क्षतिपूर्ति संबंधी प्रथाओं का विनियमन: भारतीय दृष्टिकोण

30. इस बात को ध्यान में रखते हुए कि चूंकि हमारे बैंकिंग क्षेत्र का 70 प्रतिशत हिस्सा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पास है जिनके कार्यपालकों की क्षतिपूति का निर्धारण सरकार द्वारा किया जाता है तथा उनके वेतन में परिवर्ती हिस्सा सीमित रूप में होता है, अतः भारत में क्षतिपूर्ति ढांचा संबंधी प्रस्तावित सुधार गैर-सरकारी उद्योग खंड के शेष 30 प्रतिशत के लिए ही प्रासंगिक है। भारत में निजी, विदेशी तथा स्थानीय क्षेत्र बैंकों को अपने पूर्णकालिक निदेशकों तथा मुख्य कार्यपालक अधिकारियों के पारिश्रमिक हेतु भारतीय रिज़र्व बैंक से विनियामक अनुमोदन प्राप्त करना एक वैधानिक आवश्यकता है। भारतीय बैंकों के लिए इन प्रस्तावों का मूल्यांकन करते समय भारतीय रिज़र्व बैंक प्रारंभ से ही यह सुनिश्चित करता रहा है कि क्षतिपूर्ति अत्यधिक न हो, यह उद्योग के मानदंड के अनुरूप हो, बैंक के कारोबार के आकार के अनुरूप हो तथा परिवर्ती वेतन का हिस्सा सीमित हो। विदेशी बैंकों के मामलों में रिज़र्व बैंक आम तौर पर बैंक के मुख्यालय की सिफारिश को मानता रहा है।

31. तथापि, क्षतिपूर्ति ढांचों के संबंध में वैश्विक प्रयासों में आए उत्साह के अनुरूप हमने यह निश्चय किया कि क्षतिपूर्ति ढांचों को एफएसबी सिद्धांतों के अनुरूप बनाने के लिए भारत में भी इस दिशा में सुधार की आवश्यकता है। तदनुसार, जुलाई 2010 में रिज़र्व बैंक ने पूर्णकालिक

निदेशकों/ मुख्य कार्यपालक अधिकारियों/ जोखिम उठाने वालों तथा नियंत्रक स्टाफ की क्षतिपूर्ति के संबंध में सार्वजनिक अभिमत प्राप्त करने के लिए दिशानिर्देशों के प्रारूप को जारी किया। इन दिशानिर्देशों का उद्देश्य क्षतिपूर्ति के प्रभावी अभिशासन के लिए बैंकों को प्रेरित करना, क्षतिपूर्ति को विवेकपूर्ण तरीके से जोखिम उठाने के कार्य के साथ जोड़ना, क्षतिपूर्ति संबंधी प्रथा की उन्नत पर्यवेक्षी निगरानी करना और सभी हितधारकों के बीच गठनमूलक चर्चा को सुकर बनाना है। दिशानिर्देश के अनुसार बैंकों के बोर्डों के लिए यह आवश्यक है कि वे सभी कर्मचारियों (जोखिम उठाने वालों तथा नियंत्रण/ अनुपालन स्टाफ) को शामिल करते हुए एक व्यापक क्षतिपूर्ति नीति बनाएं और उन्हें अंगीकार करें। हमने सूचित किया है कि परिवर्ती वेतन जोखिम के अनुरूप हो, परंतु वेतन के परिवर्ती हिस्से के लिए हमने किसी सीमा का प्रस्ताव नहीं किया है। जहां तक विदेशी बैंकों का संबंध है, उनके लिए इस आशय का एक वार्षिक घोषणा पत्र प्रस्तुत करना अनिवार्य होगा कि भारत में उनका क्षतिपूर्ति का ढांचा एफएसबी के सिद्धांतों और मानकों के अनुरूप है।

32. जैसा कि मैं पहले भी उल्लेख कर चुका हूं, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के कार्यपालकों के प्रोत्साहन ढांचे का निर्धारण सरकार द्वारा किया जाता है। जैसा कि सभी को ज्ञात है, सरकारी क्षेत्र के कार्यपालकों की क्षतिपूर्ति निजी क्षेत्र की तुलना में कम है। इसके पीछे जो भी ऐतिहासिक कारण रहे हों, इसके संबंध में पुनः विचार करने की जरूरत है। इस तर्क में पर्याप्त आधार है कि यदि सरकारी क्षेत्र के बैंकों को एक समान परिस्थितियों में निजी क्षेत्र के बैंकों के साथ प्रतिस्पर्धा करनी हो तो उन्हें इसके लिए प्रतिस्पर्धात्मक आधार पर प्रतिपूर्ति भी की जानी चाहिए। यदि सरकारी क्षेत्र के बैंकों की क्षतिपूर्ति प्रथा में सुधार नहीं होता है तो यह भी जोखिम है कि निजी क्षेत्र की ओर प्रतिभा के पलायन के कारण वे अपनी प्रतिभा को खो देंगे।

VII. अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानक(आइएफआरएस): सुधार संबंधी प्रस्ताव

33. संकट के दौरान उचित मूल्य लेखांकन की प्रणाली की आलोचना इस आधार पर की गई कि यह वित्तीय संकट की सामान्य विशेषताओं-अर्थात् चलनिधि रहित बाजार तथा आस्तियों की हड़बड़ी में बिक्री-से निपटने में अपर्याप्त है। यह तर्क दिया जाता है कि उचित मूल्य लेखांकन, भले ही इसका तार्किक आधार हो, संकट की स्थिति के लिए इसमें लचीलापन बिल्कुल नहीं है, बल्कि यह गिरावट को और तीव्र करता है। *सुदृढ़ विनियमन तथा पारदर्शिता को बढ़ावा देने संबंधी जी-20 के कार्यदल* ने सिफारिश की है कि लेखाविधि मानक निर्धारकों तथा विवेकपूर्ण पर्यवेक्षकों को मिलकर ऐसे समाधानों की पहचान करनी चाहिए जो वित्तीय स्थिरता को बढ़ाने तथा वित्तीय रिपोर्टों की पारदर्शिता में सुधार लाने के समर्थनकारी लक्ष्य के अनुरूप हों। तदनुसार, आइएएसबी ने संबंधित लेखाविधि मानकों में समुचित संशोधन का कार्य शुरू कर दिया है।

अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानक (आइएफआरएस) भारतीय दृष्टिकोण

34. भारत के बैंकों के लिए, 'भारतीय जीएएपी'(सामान्यतः स्वीकृत लेखाविधि सिद्धांत) में भारतीय सनदी लेखाकार संस्थान(आइसीएआइ) द्वारा जारी लेखाविधि मानक तथा भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जारी विवेकपूर्ण विनियमन आते हैं। विश्व के साथ भारत के बढ़ते एकीकरण को ध्यान में रखते हुए आइसीएआइ ने भारतीय कंपनियों द्वारा वित्तीय परिणामों का प्रस्तुतीकरण वैश्विक मानकों के अनुसार करने की जरूरत को महसूस किया है। कंपनी कार्य मंत्रालय (एमसीएस) द्वारा गठित कोर ग्रुप ने आइएफआरएस के मानकों के साथ भारतीय कंपनियों के एकीकरण हेतु चरणबद्ध रूपरेखा तैयार की गई है। तदनुसार, भारत के अनुसूचित वाणिज्य बैंकों को 1 अप्रैल 2013 की

स्थिति के अनुसार प्रारंभिक शेष की राशि का निर्धारण करने हेतु एकीकृत भारतीय लेखाविधि मानकों को अंगीकार करना होगा।

35. आइएफआरएस के साथ एकीकरण की ओर आगे बढ़ते समय भारतीय बैंकों के सामने चुनौतियां होंगी। प्रथम, वित्तीय लिखतों से संबंधित लेखाविधि मानक आइएफआरएस 9 में, जो कि बैंकों के लिए एक महत्वपूर्ण मानक है, अभी भी सुधार किया जा रहा है तथा आइएफआरएस के साथ एकीकरण का कार्य एक सतत प्रक्रिया होगी। द्वितीय, बैंकों की आइटी प्रणालियों में बदलाव करने की जरूरत पड़ेगी क्योंकि इन्हें भारतीय जीएएपी के अनुसार वित्तीय परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रोग्राम किया गया है। तृतीय, जैसा कि किसी नये कार्य में होता है, बैंकों को नये मानक की ओर सुगमता से अग्रसर होने तथा ऋण-हानि प्रावधान हेतु प्रत्याशित हानि का दृष्टिकोण अपनाने के लिए अपनी क्षमताओं का विकास करना होगा।

36. रिज़र्व बैंक ने आइएफआरएस के साथ भारतीय बैंकिंग प्रणाली के एकीकरण को सुकर बनाने के लिए एक कार्यदल का गठन किया है ताकि कार्यान्वयन संबंधी मुद्दों के समाधान के साथ-साथ परिचालनात्मक दिशा-निर्देश तैयार किए जा सके। कार्यदल के सदस्यों में भारतीय बैंक संघ (आइबीए), भारतीय सनदी लेखाकार संस्थान (आइसीएआइ) तथा रिज़र्व बैंक के विनियमन तथा बाजार से संबंधित विभाग शामिल हैं। इसके अलावा, आइएफआरएस के कार्यान्वयन में पूरी जानकारी, दक्षता तथा अनुभव रखने वाले पेशेवर लोगों को विशेष आमंत्रितियों के रूप में रखा गया है।

प्रस्तावित बीसीबीएस सुधारों का समष्टि आर्थिक प्रभाव

37. सुधार कार्यक्रम का लाभ वित्तीय संकट की बारंबारता, तीव्रता तथा सार्वजनिक लागत को कम करने तथा उत्पादन में होने वाली हानि से जुड़े परिणामों को कम करने के रूप में प्राप्त होगा। इनकी लागत संभावित उच्चतर उधार दरों तथा उधार की मात्रा में कमी के रूप में हो सकती है। क्या कड़े विनियमन तथा पर्यवेक्षण से प्राप्त होने वाले लाभ संभावित लागत से अधिक होंगे? क्या यह परिणाम अल्पावधि तथा दीर्घावधि में एक समान होगा? ये कुछ ऐसे सवाल हैं जो सभी के, विशेष रूप से सरकार और विनियामकों के जेहन में हैं। हाल के तीन अध्ययनों -अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक द्वारा किए गए दो अध्ययन तथा औद्योगिक वित्त संस्थान, जो कि वाशिंगटन स्थित निजी क्षेत्र की एक संस्था है जो बैंक के दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है, द्वारा किए गए तीसरे अध्ययन - ने इस मुद्दे का समाधान प्रस्तुत किया है।

38. बीआइएस अध्ययन ने रिपोर्ट किया है कि यदि नई आवश्यकताओं को चार वर्ष की अवधि में चरणबद्ध कर दिया जाता है तो पूंजी में प्रत्येक एक प्रतिशत अंक की वृद्धि से कार्यान्वयन अवधि के दौरान वार्षिक वृद्धि दर में 0.04 से 0.05 प्रतिशत अंक अथवा चार वर्ष की अवधि में 0.2 प्रतिशत की गिरावट आएगी। तथापि, ज्यों-ज्यों वित्तीय प्रणाली अपेक्षित समायोजन करती है ये लागतें कम होती जाएंगी, तथा मध्यावधि में इसमें विवर्तन होगा तथा वृद्धि-पथ पुनः अपने पहले के दायरे में आ जाएगा। निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि लाभ-हानि की गणना करने पर अल्पावधि में यह थोड़ी ऋणात्मक होगी, परंतु मध्यावधि से दीर्घावधि में इसमें धनात्मक प्रभाव होगा।

39. आइआइएफ का अध्ययन उल्लेखनीय रूप से उच्चतर त्याग अनुपात का आकलन करता है। अध्ययन के अनुसार, यदि सुधार के पैकेज को पूरी तरह कार्यान्वित किया जाता है तो जी3 में (अमरीका, यूरो क्षेत्र तथा जापान) वृद्धि दर में 2011-15 की पांच वर्ष की अवधि के दौरान 0.6 प्रतिशत अंक की तथा 20011-20 की दस वर्ष की अवधि में 0.3 प्रतिशत अंक की गिरावट आएगी। दो अध्ययनों के निष्कर्षों में जो अंतर है वह स्पष्टतः भिन्न-भिन्न अवधारणाओं के कारण है।

उल्लेखनीय है कि आइआइएफ के अध्ययन में उधार दरों में अधिक वृद्धि की अवधारणा को लिया गया है परंतु इसमें परिचालनात्मक दक्षता में सुधार, एक अधिक सुदृढ़ वित्तीय प्रणाली तथा वहनीय लाभप्रदता के साथ सामंजस्य रखने वाले कार्यपालक प्रोत्साहन ढांचे से मिलने वाले प्रत्याशित लाभों को हिसाब में नहीं लिया गया है।

40. कमजोर डेटाबेस तथा कई संबंधों के एक समान न होने की स्थिति को देखते हुए सुधार पैकेज के समष्टि आर्थिक प्रभाव के पूर्वानुमान में देखे गए उल्लेखनीय अंतर से आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। तथापि, उल्लेखनीय बात यह है कि परिणामों के पूर्वानुमानों में भिन्नताओं के बावजूद सभी अध्ययनों का मत एक जैसा था कि सुदृढ़ तथा स्वस्थ वित्तीय प्रणाली का लाभ वर्षों तक मिलता रहेगा।

41. रिज़र्व बैंक ने भी हमारी जीडीपी-वृद्धि के पथ पर बढ़ी हुई पूंजी आवश्यकता के प्रभाव का प्रारंभिक आकलन किया। हम नए मानदंडों में चरणों में सूक्ष्म समायोजन करेंगे ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि त्याग अनुपात स्वीकार्य सीमा तक बना रहे।

बासेल III का भारत में कार्यान्वयन

42. बासेल III संकट से प्राप्त सबक को प्रतिबिंबित करता है तथा मेरा मानना है कि इसके कारण आगे काफी बदलाव आएगा। तथापि, जैसा कि मैं पहले भी उल्लेख कर चुका हूं, सुधार के सभी उपाय हमारे लिए बाध्यकारी नहीं होंगे। इसके बावजूद, बासेल III के कार्यान्वयन से जुड़ी चुनौती को हमें कम करके नहीं आंकना चाहिए। इसका कार्यान्वयन बैंकों तथा विनियामकों दोनों के लिए अधिक क्षमता की मांग करता है। इस सम्मेलन के जरिए मैं आग्रह करता हूं कि इससे जुड़े प्रमुख मुद्दों के बारे में आप अपने विचारों से अवगत कराएं।

43. जैसा कि सभी को ज्ञात है, भारत का विवेकपूर्ण विनियमन स्वामित्व-निरपेक्ष है। ये सरकारी क्षेत्र के बैंकों, निजी क्षेत्र के बैंकों तथा विदेशी बैंकों सभी पर समान रूप से लागू होते हैं। हालांकि इन उपायों का प्रभाव अलग-अलग रूप में पड़ेगा, जो बैंकों के कारोबारी मॉडल और जोखिम प्रोफाइल एवं उनके देश तथा विदेश के परिचालनों के तुलन-पत्र पर निर्भर करेगा। सुधार पैकेज में अंतर्निहित बफर इस मंशा से बनाए गए हैं कि ये स्वचालित रूप से स्थिरीकारक का कार्य करेंगे जिसके चलते गिरावट के दौरान बाहरी समर्थन की जरूरत नहीं पड़ेगी। साथ ही, चूंकि इन बफरों का गठन एक अवधि के दौरान तथा व्यापार चक्र के उभरते दौर में किया जाएगा, अतः इससे प्रणाली में अनावश्यक तनाव नहीं होना चाहिए।

44. सरकारी क्षेत्र के बैंकों के मामलों में, स्वामित्व के नाते पूंजी-बफर के गठन हेतु सरकार को अंशदान करना होगा ताकि स्वामित्व के संबंध में 51 प्रतिशत का न्यूनतम स्तर बनाए रखा जा सके। इसके कारण सरकार की राजकोषीय स्थिति में अनावश्यक दबाव पड़ने की संभावना नहीं है क्योंकि इसका गठन चक्रीय उत्थान के ऐसे समयों में किया जाएगा जब बैंकों के लाभ तथा सरकार के राजस्व की स्थिति अच्छी हो। इसलिए, सरकारी क्षेत्र के बैंकों को बासेल III में अभिकल्पित बफरों के निर्माण में कोई समस्या नहीं आनी चाहिए।

निष्कर्ष

45. अब मैं अपनी बात समाप्त करना चाहता हूं। इस संबोधन में मेरा प्रयास बैंकों के पर्यवेक्षण और विनियमन के संबंध में वैश्विक सुधार पैकेज के महत्वपूर्ण घटकों को रेखांकित करना और भारतीय परिप्रेक्ष्य में इनका मूल्यांकन करना है। इन सुधार प्रस्तावों के समष्टि आर्थिक प्रभावों का वैश्विक स्तर पर जो आकलन किया गया है उसका एक मूल्यांकन भी मैंने प्रस्तुत किया।

46. कई चिंताएं बनी हुई हैं - इनमें से कुछ तात्कालिक हैं तो कुछ दीर्घावधि से संबंधित हैं। अभी की जो सबसे प्रमुख चिंता है वह मानकों को बारीकी से अंतिम रूप

देने की और इसे चरणबद्ध करने की है। बीसीबीएस तथा विनियामक इन चिंताओं के प्रति सजग हैं और इस बात के प्रति भी ध्यान दे रहे हैं कि नए मानदंडों की ओर सुचारु रूप से अग्रसर होने की जरूरत है, विशेष रूप से वे यह सुनिश्चित करने प्रयासरत है कि अधिक कठोर पूंजी तथा चलनिधि अपेक्षाओं से बहाली की प्रक्रिया की नाजुक स्थिति में बाधा उत्पन्न न हो।

47. सुधार पैकेज की दो विशेषताएं विशेष उल्लेख की मांग करती हैं क्योंकि इनके लिए संप्रेषण संबंधी प्रयास की जरूरत है। प्रथम, विश्व के सभी बैंक इस बात से चिंतित हैं कि पूंजी-बफर के गठन हेतु खर्च करने पर भी वे गिरावट के दौरान उसका उपयोग नहीं कर पाएंगे क्योंकि विडंबनापूर्ण स्थिति यह होती है कि इसी समय बाजार में अधिक पूंजी की अपेक्षा और मांग होती है। द्वितीय, सुधार पैकेज के कुछ घटक 'अनुपालन कीजिए ये बताइए' ढांचे के होते हैं जिसमें क्षेत्रविशेष को कारण स्पष्ट करते हुए पैकेज के किसी विशेष प्रावधान का व्यतिक्रम करने की अनुमति होती है। ऐसी स्थिति में यह जोखिम होती है कि सही और चिंतन-मनन के बाद किए गए व्यतिक्रमों को भी जान-बूझकर किए गए व्यतिक्रम के रूप में लिया जा सकता है, उससे भी बुरी बात यह होती है कि अवांछित विनियामक प्रविरिति तथा बाजार ऐसे क्षेत्रों को दंडित कर सकता है। ये समस्याएं मूलतः व्यतिक्रम का सहारा लेने के औचित्य की व्याख्या हेतु प्रभावी तथा समय पर संप्रेषण करने की जरूरत को रेखांकित करती हैं। केंद्रीय बैंक बाजार की अपेक्षाओं को दिशा देने के लिए पारंपरिक रूप से मौद्रिक नीति संबंधी संप्रेषण को काफी महत्व देता रहा है। अब, विनियामकों को भी अपने संप्रेषण कौशल में पैनापन लाना होगा।

48. भारत के वृद्धि के उच्चतर स्तर तक पहुंचने के पीछे कई कारण दिए जाते रहे हैं। इनमें से अधिकांश के बारे में हम जानते हैं। परंतु भारत की वृद्धि के कारकों में से एक बड़ा कारक पिछले दशक के दौरान वित्तीय मध्यस्थन की गुणवत्ता तथा मात्रा में आया सुधार है, जिसे अहमियत नहीं मिली है। सामान्य तौर पर भारतीय वित्तीय क्षेत्र तथा विशेष रूप से भारतीय बैंक इस महत्वपूर्ण उपलब्धि के लिए गौरव का अनुभव कर सकते हैं। जैसा कि आप सोच रहे हैं, इस सम्मेलन के दौरान तथा आगे भी, अगले दशक के दौरान आपको अपने वचनों को निभाने की चुनौती के रूप में मैं आपसे आग्रह करता हूं कि आप वैश्विक स्तर पर सोचें और स्थानीय जरूरतों के अनुसार कार्य करें।